Dhanauri International Journal of Multidisciplinary Research (DIJMR)
Volume 2 Issue 1, July (2026)
ISSN: 3107-9563 (online)
doi.org/10.5281/zenodo.21407565

भारतीय भाषा नियोजन एवं भारतीय राजनीति मे इसका प्रभाव

डॉ0 कल्पना भट्ट*
*सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग धनौरी पी0जी0 कॉलेज, धनौरी, हरिद्वार, उत्तराखण्ड

सारांशः— भाषा और राजनीति के मध्य का संबंध अत्यंत गहरा और जटिल स्वभाव का होता है। भाषा जहाँ केवल आपसी संवाद का साधन नहीं होता है ,बल्कि यह किसी एक समाज की पहचान, शक्ति, और समाज विशेष की विचारधारा का प्रतीक होता है। वही राजनीति में भाषा का प्रयोग न केवल जनता से जुड़ने हेतु किया जाता है , बल्कि यह नीति निर्धारण , राष्ट्र निर्माण और सामजिक आंदोलन की दिशा निर्धारित करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। राजनीति में भाषा प्रायः एक साधन या उपकरण के रूप में काम करती है जिससे समाज को भाषाई आधार पर प्रभावित कर निश्चित राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति का काम किया जाता है। इसे "भाषा प्रयोग द्वारा नियंत्रण" (Language manipulation) कहा जाना गलत नहीं होगा। वर्तमान समय में इसी प्रकार की समस्याओ को न्यूरो- लिन्गुइस्टिक प्रोग्रामिंग (NLP) के स्वरूप में अध्ययन किया जाता है।न्यूरो- लिन्गुइस्टिक प्रोग्रामिंग को "मानव मस्तिष्क पर मौखिक और अमौखिक सम्प्रेक्षण के प्रभाव के रूप में , जिसके माध्यम से अन्य व्यक्तियों की गतिविधियों पर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है। इस शोध पत्र के माध्यम से हम यह जाने का प्रयास करेंगे की वर्त्तमान भारतीय राजनीति तथा निर्णय निर्माण मे राष्ट्र भाषा हिंदी किस प्रकार प्रभाव डालती है और इसका व्यक्तिगत निर्णय निर्माण में क्या प्रभाव पड़ता है।

भारत में भाषा और राजनीतिक संबंध- भारत में भाषा और राजनीति का आपसी संबंध अत्यंत गहन और जटिल है। भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि यह किसी समुदाय की सांस्कृतिक और राजनीतिक पहचान का भी प्रमुख प्रतीक है। भारत बहुभाषी देश है, जिसमें विभिन्न भाषाई समूह रहते हैं, इसलिए भाषा ने राजनीतिक आंदोलन, दलों की नीतियों और प्रशासनिक निर्णयों को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरण के लिए, महाराष्ट्र में मराठी भाषा के संवर्धन के लिए चलाए गए आंदोलन ने राज्य प्रशासन और रोजगार के अधिकारों पर प्रभाव डाला, जबकि तमिलनाडु में तमिल भाषा की रक्षा और प्रचार ने राज्य और केंद्र सरकार के बीच राजनीतिक संतुलन बनाए रखने में योगदान किया। संवैधानिक दृष्टि से भी भाषा और राजनीति का गहरा संबंध देखा जा सकता है। भारतीय संविधान ने 22 भाषाओं को आधिकारिक मान्यता दी है, जिससे भाषाई विविधता और सामाजिक समरसता सुनिश्चित हुई। 1956 में राज्य पुनर्गठन अधिनियम के तहत राज्यों का गठन भाषाई आधार पर किया गया, जो दिखाता है कि भाषा केवल सांस्कृतिक मुद्दा नहीं, बल्कि संघीय ढांचे और राजनीतिक स्थिरता से भी जुड़ी हुई है। भाषा नीति ने प्रशासन और चुनावी राजनीति में भी निर्णायक भूमिका निभाई है। हिंदी और अंग्रेजी को राजभाषा के रूप में अपनाने के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं को संवैधानिक मान्यता देना राजनीतिक संतुलन बनाने का एक प्रयास था। साथ ही, राजनीतिक दल और सरकारें अक्सर स्थानीय भाषाओं में प्रचार

Corresponding author email: kalpanabhutt9@gmail.com
Published online-17 July 2026

करके जनता के समर्थन को बढ़ाती हैं। यह दिखाता है कि भाषा केवल सामाजिक पहचान का प्रतीक नहीं, बल्कि राजनीतिक शक्ति और निर्णय निर्माण का भी महत्वपूर्ण उपकरण है। इस प्रकार, भारत में भाषा और राजनीति का संबंध पहचान, सत्ता, नीति निर्माण और सामाजिक समरसता के कई आयामों से जुड़ा हुआ है। भाषा ही वह माध्यम है जिसके जरिए समाज के विभिन्न समूह अपने अधिकारों की रक्षा, राजनीतिक भागीदारी और सांस्कृतिक संरक्षण सुनिश्चित करते हैं।

भाषा नीति और भाषा नियोजन: परिभाषा और उद्देश्य- भाषा नीति और भाषा नियोजन का मुख्य उद्देश्य किसी विशिष्ट भाषा की स्थिति, संरचना, और उपयोग को निर्धारित करना है। भारत जैसे बहु भाषायी देश में भाषागत नीतियों का निर्माण और भाषा नियोजन अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है जिसका कारण केवल बहु भाषायी राष्ट्र होने के कारण सामाजिक समस्याओ को समाप्त करना ही नहीं बल्कि नीतियों के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओ को दूर करने तथा राजनीतिक सामंजस्यता बनाना भी होता है। यह निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति करता है:

भाषा का संरक्षण या परिवर्तन: किसी भाषा को संरक्षित करना या उसे बदलना।

मृत साहित्यिक भाषा का पुनरुद्धार: जैसे, हिब्रू भाषा का पुनरुद्धार।

नई साहित्यिक भाषा का निर्माण: जैसे, इंडोनेशियाई भाषा का निर्माण।

क्षेत्रीय और वैश्विक मेटा-भाषा प्रणाली का निर्माण: जैसे, एस्पेरांतो का निर्माण।

भारतीय संविधान में भाषा का स्थान- भारतीय संविधान में भाषा से संबंधित प्रावधानों का वर्णन भाग XVII में किया गया है, जिसमें अनुच्छेद 343 से 351 तक भाषा के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। संविधान के अनुच्छेद 343(1) के अनुसार, संघ की आधिकारिक भाषा हिंदी होगी, जो देवनागरी लिपि में होगी। इसके अतिरिक्त, अंग्रेजी को 15 वर्षों तक आधिकारिक भाषा के रूप में उपयोग की अनुमति दी गई थी, जिसे बाद में अनिश्चितकाल के लिए जारी रखा गया। आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को आधिकारिक मान्यता प्राप्त है, जिनमें हिंदी, बांग्ला, मराठी, तमिल, तेलुगू, उर्दू, पंजाबी, गुजराती, मलयालम, कन्नड़, ओडिया, असमिया, कश्मीरी, कोंकणी, मैथिली, मणिपुरी, नागपुरी, संस्कृत, सिंधी, डोगरी, संथाली, और बोडो शामिल हैं। इन भाषाओं को संविधानिक संरक्षण प्राप्त है और ये संघ और राज्य सरकारों द्वारा आधिकारिक कार्यों में उपयोग की जाती हैं।

क्षेत्रीय भाषाओं और अस्मिता की राजनीति- भारत में भाषा और राजनीति का संबंध गहरे सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ा हुआ है। क्षेत्रीय भाषाएँ न केवल संवाद का माध्यम हैं, बल्कि वे क्षेत्रीय अस्मिता और पहचान का भी प्रतीक हैं। उदाहरण के लिए, तमिलनाडु में हिंदी के विरोध में हुए आंदोलन ने यह स्पष्ट किया कि भाषा का संबंध केवल संवाद से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और राजनीतिक पहचान से भी है। इसी प्रकार, असम में बांग्ला भाषियों के खिलाफ हुए आंदोलन ने यह दर्शाया कि भाषा के आधार पर अस्मिता की राजनीति कैसे आकार लेती है। इन आंदोलनों ने यह सिद्ध किया कि भाषा नीति में संवेदनशीलता और समावेशिता की आवश्यकता है, ताकि विभिन्न भाषाई समूहों की अस्मिता की रक्षा की जा सके।

भाषा नीति के मॉडल और उनके प्रभाव- विभिन्न देशों में भाषा नीति के विभिन्न मॉडल अपनाए गए हैं। भारत में अपनाया गया मॉडल बहुभाषिकता और सह-अस्तित्व पर आधारित है। इस मॉडल में एक ओर जहां हिंदी को संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है, वहीं अन्य भाषाओं को भी संविधानिक संरक्षण प्राप्त है। हालांकि, यह मॉडल कई चुनौतियों का सामना करता है, जैसे कि विभिन्न भाषाई समूहों के बीच असंतोष और संघर्ष। उदाहरण के लिए, हिंदी के बढ़ते प्रभाव के कारण दक्षिण भारत में विरोध की भावना उत्पन्न हुई है। ऐसे में, भाषा नीति में संतुलन और समावेशिता की आवश्यकता है, ताकि सभी भाषाई समूहों की अस्मिता की रक्षा की जा सके।

भारत की भाषा नीति ने देश की बहुभाषिकता और सांस्कृतिक विविधता को सम्मानित किया है। हालांकि, विभिन्न भाषाई समूहों के बीच संतुलन बनाए रखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इसके लिए आवश्यक है कि भाषा नीति में संवेदनशीलता, समावेशिता, और क्षेत्रीय अस्मिता की रक्षा की जाए। इसके अतिरिक्त, शिक्षा, मीडिया, और प्रशासनिक कार्यों में भाषाई विविधता को सम्मानित करना आवश्यक है, ताकि सभी भाषाई समूहों को समान अवसर मिल सकें और वे अपनी अस्मिता को बनाए रख सकें।

भारतीय राजनीतिक दलों की भाषा नीतियाँ : एक विश्लेषण- भारत में भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि यह सामाजिक पहचान, सांस्कृतिक अस्मिता और राजनीतिक दिशा-निर्देशन का भी प्रमुख आधार रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भाषा का प्रश्न कई बार राजनीतिक विमर्श और संघर्षों का केंद्र बना। विभिन्न राजनीतिक दलों ने अपनी विचारधारा और क्षेत्रीय समर्थन आधार को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग भाषा नीतियाँ अपनाईं। इन नीतियों ने भारतीय लोकतंत्र में भाषा और राजनीति के जटिल संबंधों को और स्पष्ट किया।

1. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (CPI) की नीति- अप्रैल 1965 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीआई) की राष्ट्रीय परिषद् ने घोषणा की, कि अंग्रेज़ी भाषा को यथाशीघ्र हिंदी भाषा से प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। सीपीआई के अनुसार, "भाषा समस्या का समाधान तभी संभव है जब सभी क्षेत्रीय भाषाओं के समान और न्यायपूर्ण विकास को सुनिश्चित किया जाए।" साथ ही, पार्टी ने यह भी कहा कि हिंदी को भारत की संपर्क भाषा **(Lingua Franca)** के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, सीपीआई ने उर्दू भाषा की सुरक्षा और संरक्षण का भी आश्वासन दिया, जिससे यह संकेत मिलता है कि पार्टी भाषाई विविधता को बनाए रखते हुए हिंदी के प्रयोग को बढ़ाना चाहती थी।

2. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) [CPI (M)]

सीपीआई (एम) की भाषा नीति अपेक्षाकृत अधिक संतुलित रही। यह पार्टी सभी भारतीय भाषाओं को समान दर्जा देने की पक्षधर रही। इसके अनुसार, हिंदी को अन्य भाषाओं पर वरीयता नहीं दी जानी चाहिए। उनका मानना था कि अंग्रेज़ी से हिंदी की ओर संक्रमण उसी समय होना चाहिए जब राज्यों में अंग्रेज़ी से क्षेत्रीय भाषाओं की ओर क्रमिक परिवर्तन किया जाए। इस परिवर्तन की सफलता के लिए केंद्र सरकार की सहायता को अनिवार्य माना गया (गांधी, 1982: 73)।[1]

3. द्रविड़ मुनेत्र कषगम (DMK)- तमिलनाडु में आधारित डीएमके पार्टी का दृष्टिकोण पूर्णतः क्षेत्रीय अस्मिता पर केंद्रित रहा। इसने हिंदी भाषा के प्रभुत्व का विरोध करते हुए तमिल भाषा के विस्तार और संवर्धन का संकल्प लिया। पार्टी का कहना था कि जब तक तमिल और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं को आधिकारिक भाषा का दर्जा नहीं मिलता, तब तक अंग्रेज़ी को वैकल्पिक भाषा के रूप में बनाए रखना आवश्यक है। डीएमके का यह दृष्टिकोण उसके तमिल-केन्द्रित आधार और हिंदी-विरोधी आंदोलन की पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ था।

4. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (INC)- भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जिसकी स्थापना 1885 में हुई, ने भाषा प्रश्न पर ऐतिहासिक भूमिका निभाई। कांग्रेस ने भारतीय भाषाओं के विकास का समर्थन किया और हिंदुस्तानी (हिंदी का एक स्वरूप) को राष्ट्रीय भाषा मानने की वकालत की। धीरे-धीरे पार्टी ने अंग्रेज़ी के प्रयोग को केवल प्रशासन और राष्ट्रीय जीवन के विशेष क्षेत्रों तक सीमित करने का प्रयास किया। फिर भी, व्यावहारिक स्तर पर कांग्रेस को कई बार अपने ही सिद्धांतों से समझौता करना पड़ा। 1963 का राजभाषा अधिनियम और 1967 का राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, जिनमें अंग्रेज़ी को अनिश्चितकाल तक सह-आधिकारिक भाषा बनाए रखने की व्यवस्था की गई थी, कांग्रेस शासनकाल में ही पारित किए गए। यह उसकी घोषित नीति के विपरीत माना गया।

5. कांग्रेस के घोषणापत्र और अल्पसंख्यक नीति- कांग्रेस के 1998, 1999 और 2004 के घोषणापत्रों में भाषा प्रश्न पर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया। पार्टी ने अपना ध्यान धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों पर केंद्रित किया। इसमें विशेष रूप से केरल और कर्नाटक के मुस्लिम समुदायों को शिक्षा और सरकारी नौकरियों में अवसर देने का वादा किया गया। कांग्रेस ने अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय की स्थापना का भी आश्वासन दिया, ताकि गरीबी, सामाजिक-भाषाई भेदभाव और अल्पसंख्यक एकीकरण जैसे मुद्दों पर समन्वित कार्य हो सके।

पार्टी ने मौलाना आज़ाद एजुकेशन फाउंडेशन तथा मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी (हैदराबाद) की स्थापना कर शिक्षा व तकनीकी प्रशिक्षण में उर्दू को बढ़ावा दिया। महिलाओं को उर्दू माध्यम से माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने की योजनाएँ भी इसी का हिस्सा थीं। कांग्रेस ने उत्तर प्रदेश और बिहार में उर्दू को दूसरी राजकीय भाषा का दर्जा देने का वादा किया, हालाँकि यह वादा अब तक पूर्णतः लागू नहीं हो पाया है।

मूल्यांकन और निष्कर्ष- 1998, 1999 और 2004 के घोषणापत्रों में किए गए वादों और 2011 तक की उपलब्धियों की तुलना करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि कांग्रेस ने आंशिक रूप से अपने लक्ष्यों को पूरा किया। 2006 में अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय ने इन कार्यों की जिम्मेदारी ली और कुछ योजनाओं को सफलतापूर्वक लागू किया। मौलाना आज़ाद एजुकेशनल फाउंडेशन और नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना इसके उदाहरण हैं। यहाँ तक कि कांग्रेस की आधिकारिक वेबसाइट हिंदी, उर्दू और अंग्रेज़ी तीन भाषाओं में उपलब्ध है। तथापि, उर्दू को दूसरी राजकीय भाषा का दर्जा देने का वादा अभी अधूरा है।

यही भाषाई विविधता भारत में भाषा की राजनीति को एक महत्वपूर्ण और संवेदनशील विषय बनाती है। भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति की पहचान, संस्कृति, शिक्षा, प्रशासन तथा राजनीतिक भागीदारी से भी गहराई से जुड़ी हुई है। इसलिए भाषा से संबंधित नीतियाँ और निर्णय देश के सामाजिक एवं राजनीतिक वातावरण को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। भारत में भाषा की राजनीति का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष भाषाई विविधता और राष्ट्रीय एकता के बीच संतुलन बनाए रखना है। संविधान में हिंदी को राजभाषा तथा अंग्रेज़ी को सहायक आधिकारिक भाषा का दर्जा दिया गया है। इसके बावजूद देश के अनेक राज्यों में हिंदी मातृभाषा नहीं है। ऐसे राज्यों में समय-समय पर हिंदी के अनिवार्य प्रयोग या उसके विस्तार को लेकर विरोध और असंतोष देखने को मिला है। इन परिस्थितियों से स्पष्ट होता है कि किसी भी भाषा को बढ़ावा देने के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं के सम्मान और संरक्षण को भी समान महत्व देना आवश्यक है।

संदर्भ सूची

1. बाज़िएव, ए. टी., इसाएव, एम. आई. (1973). भाषा और जातीयता. मॉस्को: साइंस।
2. जाफ़रकुलिएव, एम. ए. (1992). बहु-राष्ट्रीय राज्य में न्यायिक कार्यवाहियों की भाषा, मॉस्को।
3. डाइकोव, ए. एम. (1963). आधुनिक भारत में राष्ट्रीय प्रश्न, मॉस्को स्टेट यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. ईस्टमैन, सी. एम. (1983). भाषा योजना: एक परिचय, सैन फ़्रांसिस्को।
5. एडवर्ड्स, जे. (1994). बहुभाषावाद, लंदन–न्यूयॉर्क।
6. गाक, वी. जी. (1989). भाषा नीति के रूपों की प्रकारिकी, संख्या 5, पृ. 104–133।
7. गांधी, के. एल. (1982). आधुनिक भारत में भाषा नीति, मॉस्को: साइंस पब्लिशर।
8. हाउगन, ई. (1972). भाषा का पारिस्थितिकी तंत्र, स्टैनफ़ोर्ड, अमेरिका।
9. क्ल्यूएव, बी. आई. (1978). स्वतंत्र भारत की जातीय और भाषाई समस्याएँ, मॉस्को: साइंस पब्लिशर।